SHIKSHA SAMVAD
International Open Access Peer-Reviewed & Refereed
Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
Volume-02, Issue-01, September- 2024
www.shikshasamvad.com

मानवाधिकार : एक विहंगम अवलोकन

प्रतिभा क्रिस्टी
शोधार्थिनी
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्याल,
गजरोला, अमरोहा, (उ0प्र0)

डॉ0 राजकुमार
शोध पर्यवेक्षक
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्याल,
गजरोला, अमरोहा, (उ0प्र0)

सारांश

मानवाधिकार के संरक्षण का प्रश्न वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय चर्चा का विषय बना हुआ है क्योंकि इसकी अवधारणा में समूल मानवीय संवेदनाओं का सार निहित है। वैसे तो मानवाधिकार की सर्वोच्च अभिव्यक्ति 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित मानवाधिकारों के सार्वजनिक घोषणा पत्र (Universal Declaration of Human Rights) में मिलती है, परन्तु इसके पूर्व 1215 ई0 के मैग्नाकार्टा के महान घोषणा पत्र में, 1679 के बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम, 1689 के अधिकार पत्र, 1776 के अमरीकी स्वतन्त्रता सम्बन्धी घोषणा पत्र, 1789 के फ्रांसीसी क्रान्ति के अतिरिक्त बर्लिन कांग्रेस, ब्रुसेल्स सम्मेलन, हेग शान्ति सम्मेलन, अटलाण्टिक चार्टर में भी मनुष्य के अधिकारों एवं स्वतन्त्रताओं को प्राथमिकता दी गई। इससे विश्व के सभी लोगों में मानवाधिकारों के प्रति जागरूकता आयी। 1945 के बाद तो यह एक शक्तिशाली विचारधारा के रूप में उभर कर सामने आया, परन्तु दुर्भाग्यवश शीत युद्ध के दौरान यह मुद्दा सुप्तावस्था में ही रहा। शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात् इस विषय पर पुनः नयी बहस का सूत्रपात हुआ, जिसका कारण यह है कि आज विश्व में मानवाधिकारों से वंचित लोगों का दायरा निरन्तर बढ़ता जा रहा है। फिर चाहे वह एशिया, अफ्रीका, यूरोप हो या अमेरिका, किसी न किसी रूप में मानवाधिकार का प्रश्न वर्तमान के बदलते परिदृश्य में चुनौती के रूप में विद्यमान है।

प्रस्तावना

अब प्रश्न यह उठता है कि मानवाधिकार है क्या? मानवाधिकार मूल रूप से उन अधिकारों को कहते हैं जो मनुष्य को किसी समुदाय, राज्य, राष्ट्र, जाति, कबीले के सदस्य होने के कारण नहीं बल्कि मनुष्य होने के कारण प्राप्त होते हैं।[1] इस प्रकार मानवाधिकार सभी व्यक्तियों के लिए उसकी जाति, पंथ, धर्म, लिंग तथा राष्ट्रीयता के बावजूद

जन्मजात होते हैं। ये अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक होते हैं, क्योंकि ये उनकी गरिमा एवं स्वतंत्रता तथा शारीरिक, नैतिक, सामाजिक तथा भौतिक कल्याण में सहायक होते हैं। वैसे तो मानवाधिकार की परिभाषा देना कठिन है, क्योंकि कभी–कभी इसे मूल अधिकार, आधारभूत अधिकार तथा नैसर्गिक अधिकार भी कहा जाता है, फिर भी यह कहा जा सकता है कि मानवाधिकार का विचार मानव–गरिमा के विचार में संलग्न है।[2]

मानवाधिकार की अवधारणा है तो अत्याधुनिक, परन्तु इसके विकास का लम्बा इतिहास है। अधिकार सम्बन्धी पाश्चात्य मान्यताओं पर यूरोप के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, वैचारिक आदि आन्दोलनों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। चर्च एवं सामंतशाही प्रभुत्व के युग में धर्म तथा राजनीति के एक साथ जुड़ने के कारण तमाम ऐसी संस्थाएं समाज में स्थापित हुईं, जो शाश्वत सदस्यता के नाम पर मनुष्य को उसके न्यूनतम अधिकारों से वंचित रखती हैं, परन्तु रोमन तथा मध्य युग में प्राकृतिक अधिकारों के प्रयत्न ने अधिकार की भावना को जीवित रखा, जिसके मूल प्रतिपादक सिसरो थे, जहां से यह विचारधारा रोमन न्यायविदों से निकलकर ईसाई पादरियों के प्राकृतिक कानून की अवधारणा में व्यक्त होती हुई अपने व्यक्तिवादी स्वरूप में हॉब्स तथा लॉक के विचारों में प्रकट हुई। सामाजिक संविदा के आधार पर राज्य की विवेचना करने वाले हॉब्स, लॉक, रूसो आदि ने भी अधिकारों के रूप में जीवन, स्वतंत्रता तथा सम्पत्ति को प्राकृतिक अधिकार माना है।

इसके पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की वैचारिक पृष्ठभूमि में मानवाधिकार की अवधारणा अधिक विकसित रूप में सामने आयी। इस विकास क्रम में संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट का मत था कि यदि अन्तर्राष्ट्रीय शांति, सुरक्षा तथा न्याय को प्राप्त करना है तो मनुष्य के अधिकारों तथा उसकी आधारभूत स्वतंत्रताओं का अतिक्रमण नहीं किया जाना चाहिए। 6 जनवरी 1941 को अमेरिकी कांग्रेस को भेजे गये संदेश में उन्होंने चार स्वतंत्रताओं का भी उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त अटलांटिक चार्टर (14 अगस्त 1941) तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा (जनवरी 1942) ने उन आन्दोलनों को प्रेरणा प्रदान की, जिनका आरम्भ ही मानवाधिकार तथा आधारभूत स्वतंत्रताओं को प्राप्त करने के लिए किया गया था। संयुक्त राष्ट्र का चार्टर मानवाधिकारों को प्रोत्साहन देने के कार्य को संयुक्त राष्ट्र के प्रमुख कार्यों में से मानता है। इसकी प्रस्तावना में अनेक बार मानवाधिकार शब्द का प्रयोग किया गया है, साथ ही मानवाधिकारों तथा प्रत्येक मनुष्य के सम्मान तथा मानवीय मूल्य के प्रति सम्मान को बार–बार व्यक्त किया गया है।[3]

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनु0 1 के खण्ड–3 में कहा गया है कि विश्व की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मानवतावादी समस्याओं के समाधान हेतु राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त किया जाए तथा जाति, लिंग भाषा या धर्म का भेदभाव किये बिना सभी लोगों के लिए मानवाधिकारों तथा आधारभूत स्वतंत्रताओं के सम्मान को प्रोत्साहन दिया जाए। चार्टर में अनु0 55 में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र संघ जाति, लिंग, भाषा या धर्म का भेदभाव किये बिना समस्त लोगों के लिए मानवाधिकारों तथा आधारभूत स्वतंत्रताओं के विश्वव्यापी सम्मान तथा पालन को बढ़ावा देगा। अनु0 526 के अनुसार सभी सदस्य राज्य अनु0 55 में घोषित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संयुक्त राष्ट्र के सहयोग से सम्मिलित तथा पृथक् कार्यवाही करने के लिए वचनबद्ध हैं। साथ ही अनु0 62(2) तथा 76(सी) इस बात पर बल देते है। कि सभी लोगों के मानवाधिकारों तथा स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित किया जाए। वास्तव में संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में मानवाधिकारों की सुरक्षा, सम्मान तथा उसके पालन के प्रति विचार को प्रोत्साहन प्रदान किया गया है।

SHIKSHA SAMVAD PASSION TOWARDS EXCELLENCE

इस परिदृश्य में फरवरी 1946 में संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक तथा सामाजिक परिषद ने अपने प्रथम अधिवेशन में मानवाधिकार आयोग की स्थापना की तथा 10 दिसम्बर 1948 को पेरिस में अपने तीसरे अधिवेशन में मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणा पत्र का प्रस्ताव पास किया। यद्यपि यह घोषणा सिद्वान्तों का एक विवरण मात्र है, तथापि यह विश्व का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रलेख माना गया है, क्योंकि इस सिद्वान्त में मानव परिवार के सभी सदस्यों की जन्मजात गरिमा तथा सम्मान एवं असंक्राम्य अधिकारों की मान्यता विश्व में स्वतंत्रता, न्याय एवं शान्ति का आधार आदि शामिल किया गया है।

आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शान्ति एवं सद्भावना के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु मानवाधिकारों का संरक्षण एवं विकास एक अनिवार्य शर्त बन चुकी है। संयुक्त राष्ट्र संघ के पूर्व महासचिव डांग हेमर शोल्ड ने इस तथ्य को सार्वजनिक तौर पर स्वीकार किया था। उन्हीं के शब्दों में, ''हम जानते हैं कि शान्ति का प्रश्न तथा मानवाधिकारों का विषय एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। मानवाधिकारों की मान्यता के बिना हमें शान्ति कभी नहीं मिलेगी तथा केवल शान्ति के ढांचे के अन्तर्गत ही मानवाधिकारों का विकास हो सकता है।''[4]

किन्तु वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विकसित देशों ने मानवाधिकार को लेकर जिस बहस की शुरूआत की है, उनमें मानवाधिकार के प्रति उनकी प्रतिबद्वता कम तथा विश्व व्यवस्था में अपने वर्चस्व को बनाये रखने की प्रवृत्ति ही अधिक दृष्टिगोचर होती है। विश्व मंचों पर विकसित देश उन विकासशील एवं अर्द्वविकसित देशों को ही आर्थिक मदद प्रदान करते हैं जो राष्ट्र उनकी परिभाषा के अनुरूप मानवाधिकारों से कहीं अधिक विकास महत्वपूर्ण समझते हैं, क्योंकि विकास के माध्यम से मानवाधिकार स्वतः ही पूर्ण हो जायेगा।

वास्तव में मानवाधिकारों के संरक्षण के नाम पर विकसित देश शेष विश्व व्यवस्था में अपनी घुसपैठ कर अपने हितों का संरक्षण, संवर्द्धन एवं पोषण चाहते हैं। शीत युद्ध काल में भी उनका उद्देश्य साम्यवादी व्यवस्था की समाप्ति तथा स्वप्रभाव की एक ऐसी व्यवस्था का सृजन करना था, जिससे उनके हित संरक्षित रह सकें। वास्तव में शीत युद्ध काल में आज के पश्चिमी देशों की साम्यवादी सिद्वान्त के विरूद्ध अपनायी जाने वाली रणनीति के दो महत्वपूर्ण तत्व थे– 'मानवाधिकार एवं 'लोकतंत्र'। पश्चिमी देशों का सम्पूर्ण प्रयास यह सिद्ध करने पर होता था कि 'साम्यवाद' लोकतंत्र तथा मानवाधिकार का विरोधी है। किन्तु सोवियत संघ के अवसान के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में आये बदलाव के फलस्वरूप अब पश्चिमी राष्ट्रों के समक्ष अपने प्रभुत्व विस्तार हेतु सोवियत गुट से होड़ करने की समस्या तो नहीं है किन्तु विश्व के जो भी क्षेत्र उसके लक्ष्य में हैं, उन्हें प्रभुत्व क्षेत्र में लाने हेतु एक नई रणनीति की आवश्यकता है और इन आवश्यकताओं की पूर्ति मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए बनाई गई रणनीति द्वारा की जा रही है। विकसित राष्ट्र अपने–अपने आर्थिक उपनिवेशवाद की सीमा के विस्ताार के लिए मानवाधिकार के प्रश्न पर दोहरे मानदण्ड का प्रयोग करते हैं, जैसा कि अमेरिका, ब्रिटेन तथा अन्य पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा किया जाता रहा है। अमेरिका तथा मित्र राष्ट्रों ने तो दुनिया की सबसे निरंकुश व्यवस्थाओं एवं क्रूर तानाशाहों को भी समर्थन दिया है।[5]

सोवियत संघ के पराभव के पश्चात् मानवाधिकारों के सम्बन्ध में रूस की नीति में काफी परिवर्तन आया। अपनी विदेश नीति प्रतिपादित करते हुए रूस के विदेश मंत्री ने यह पहल की कि मानवीय अधिकारों के कार्यान्वयन हेतु अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को अधिक प्रभावशाली नियन्त्रण रखना चाहिए तथा यदि आवश्यक हो तो इस हेतु नई संस्थाएं स्थापित की जानी चाहिए। रूस के इस परिवर्तित नीति के केन्द्र में मानवाधिकारों के सन्दर्भ में उनके

उल्लंघन की कसौटी का सही मानदण्ड निर्धारित करना था। चीन के 1989 के थ्यानमेन चौक की घटना के पश्चात् पश्चिमी देशों द्वारा मानवाधिकारों के उल्लंघन को लेकर तमाम चिंताएं व्यक्त की गईं। प्रश्न यह उठता है कि मानवाधिकार को बाधित कौन करता है तथा मानवाधिकार के हनन की कसौटी क्या है? वस्तुतः मानव मात्र की स्वतंत्रता में बाधा पहुंचाना या बाधा पहुंचाने के प्रयास मात्र से ही मानवाधिकार का उल्लंघन माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त सत्तातन्त्र का दमन चक्र हिंसक गतिविधियों में लिप्तप्राय आतंकवादी संगठनों की कार्यवाहियों का दोहन आदि भी मानवाधिकारों के उल्लंघन की कसौटी प्रस्तुत करती है।

मानवाधिकारों की सैद्वान्तिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर मतभेद शीत युद्ध से ही बना रहा है। यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय मंचों, सम्मेलनों तथा मानवाधिकारों पर आयोजित किये जाने वाले अधिवेशनों में ज्यादातर विकसित देश तृतीय विश्व के अनेक देशों पर मानवाधिकार के हनन का आरोप लगाते हैं, जबकि तृतीय विश्व के देशों का कहना है कि इसके लिए उनकी राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियां जिम्मेदार हैं।

अमेरिका सहित पश्चिम के पूंजीवादी देश साम्यवादी व्यवस्था वाले देशों की आलोचना इस आधार पर करते हैं कि वहां मनुष्य के प्राकृतिक अधिकारों को दमित किया जाता है। पश्चिमी देश मानवाधिकार एवं नागरिकों के राजनीतिक अधिकारों को एक–दूसरे का पर्याय मानते हैं। जबकि विकासशील देशों का तर्क है कि आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पिछड़ेपन या दुर्बलता के कारण नागारिक अधिकारों का कोई अर्थ नहीं रह जाता। विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों का मापदण्ड अपनी–अपनी परिस्थितियों की ही भांति ही अस्पष्ट बना हुआ है। अमेरिकी विदेशमंत्री वारेन क्रिस्टोफर का मानना है कि शीत युद्धोत्तर विश्व की स्वतंत्रता की कार्यसूची में प्रत्येक कैदी, उत्पीड़न एवं वैसा व्यक्ति जिसमें मूलभूत मानवाधिकारों की अनदेखी की गई हैं, शामिल किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त वे उत्पीड़न जातीय उन्मूलन तथा राजनीति से अभिप्रेरित हत्याओं आदि को भी मानवाधिकारों के हनन के रूप में परिभाषिता करते हैं।[6]

इस प्रकार स्पष्ट है कि मानवाधिकारों का हनन किस हद तक किया जा सकता है, इसका स्पष्ट मापदण्ड निर्धारित करना मुश्किल है, परन्तु वर्तमान विश्व के लोक कल्याणकारी राज्य की कल्पना में मानवीय मूल्यों, आदर्श एवं उसके सकारात्मक दृष्टिकोणों तथा जीवनयापन के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा प्रजातीय स्वतन्त्रताओं एवं अधिकारों पर अतिक्रमण ही मानवाधिकार के हनन का पैमाना हो सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय विश्व में विकासशील देशों के बढ़ते शोषण की उपनिवेशवाद की प्रवृत्ति को ही मानवाधिकार के वियना उद्घोषणा पत्र (Viena Declaration of Human Rights) में स्पष्ट कहा गया है कि प्रजातन्त्र विकास तथा मानवीय अधिकार एवं मौलिक स्वतन्त्रताएं– एक–दूसरे से सम्बन्धित हैं। स्पष्ट तौर पर अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में एकपक्षीय विचारधारा के प्रभाव एवं उसके प्रभाव से उपजते उदारीकरण, वैश्वीकरण के नकारात्मक पक्ष को भी मानवाधिकार के हनन की परिधि में रखा गया है।

वर्तमान में स्थानीय परिस्थितियों को नजरअन्दाज करते हुए मानवाधिकारों की विश्वातीत एकरूपता की व्यवस्था का तृतीय विश्व के देशों ने विरोध किया है। इस अन्तर्द्वन्द्व को आज सार्वभौमवाद बनाम सांस्कृतिक विशिष्टतावाद के रूप में जाना जाता है। तृतीय विश्व के देशों में मानवाधिकार की स्थिति उनकी परिस्थितियों पर आधारित है, क्योंकि यह सर्वमान्य तथ्य है कि तृतीय विश्व के विकासशील राष्ट्रों की अपेक्षा आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक

विविधता अधिक पाये जाते हैं। विकासशील देशों की राजनीतिक प्रणालियों के मध्य विरोधाभास की स्थिति का प्रमुख कारण भी उनकी आन्तरिक स्थितियां हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में तृतीय विश्व के देशों की शासन सैद्वान्तिक रूपरेखा स्पष्ट तथा वास्तविक स्थिति में नहीं है। तृतीय विश्व के अधिकांश देशों में सैन्यतन्त्र एकदलीय लोकतन्त्र प्रतिबन्धित या इस्लामी लोकतन्त्र के स्वरूप दिखलाई पडते हैं।

वास्तव में तीसरी दुनिया के राष्ट्रों की राजनीतिक समस्याओं को मुख्यतः चार भागों में विभक्त किया जा सकता है– आधुनिकीकरण की प्रकिया में उपजी निराशा, आन्तरिक संघर्ष (भाषायी, धार्मिक एवं जातीय), राजनीतिक अस्थिता एवं सेना की प्रमुख भूमिका। जातीय, क्षेत्रीय एवं धार्मिक संघर्ष के साथ–साथ वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया से तृतीय विश्व के अधिकांश राष्ट्र गुजर रहे हैं, जिसमें राष्ट्र का सैन्य बल महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिससे सैनिक अधिनायकवाद की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है।

यद्यपि प्रजातन्त्र विश्व में एक बहुप्रचलित एवं लोकप्रिय प्रणाली के रूप में मान्यता प्राप्त है, परन्तु ऐशियाई, अफ्रीकी, लैटिन अमेरिकी तथा कुछ पश्चिमी देशों में भी 'पारदर्शी लोकतन्त्र' का स्वरूप विद्यमान नहीं है। इस परिदृश्य में अक्षरशः पालन एक गम्भीर समस्या है। पश्चिम सहित अनेक विकसित देशों का मानना है कि मानवाधिकारों की अवधारणा सम्पूर्ण विश्व के लिए व्यवहार्य है। इसलिए विश्व की सभी सरकारों को चाहिए कि इसका पालन करें, चाहे उनकी सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्थिति जैसी भी हो। इसके विपरीत तृतीय विश्व के देशों का तर्क यह है कि मानवाधिकार के सार्वभौम स्वरूप के बावजूद इसके निर्धारण में राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय विशिष्टताओं सहित उनकी विभिन्न धार्मिक, सांस्कृतिक एव ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। यही वह मूल प्रश्न है जो पश्चिमी देशों एवं तृतीय विश्व के देशों में मानवाधिकार की आधारभूमि निर्मित करने के स्थान पर उनसे और भी पृथक् होती जा रही है।[7]

स्पष्ट है कि तृतीय विश्व के देशों में मानवाधिकार हनन का निश्चित प्रतिमान पाया जाता है, जो इसकी राजनीतिक व्यवस्था से जुड़ी है। पारदर्शी लोकतन्त्र' के अभाव ने जहां प्रशासनिक प्रतिबद्धता, राजनीतिक यंत्रणा, दमन तथा विकास को अवरूद्ध किया है, वहीं आतंकवादी गतिविधियों के कारण सैन्य बलों द्वारा प्रतिरोधात्मक कार्यवाही, मूल निवासियों के विस्थापन की समस्या, बाल श्रम, बेगारी, महिला उत्पीडन एवं शोषण के रूप में मानवाधिकार हनन को नई चुनौतियां प्रस्तुत करता है। परन्तु एमनेस्टी इण्टरनेशनल द्वारा 1994 में प्रकाशित एक रिपोर्ट से यह प्रमाणित होता है कि मानवाधिकारों के हनन की समस्या सिर्फ तृतीय विश्व में ही नहीं, बल्कि विकसित देशों में भी विद्यमान है। जैसा कि इस सम्बन्ध में पॉमर एवं पर्किन्स ने भी कहा है कि 'विश्व के कुछ ही लोग सुरक्षित हैं। अधिकांश क्षेत्रों में तो अभी भी इसका कोई अर्थ नही है'।

आधुनिक सभ्यता जिस उपभोक्तापरक जीवन दृष्टि एवं मानव निरपेक्ष, बल्कि मानव विरोधी आर्थिक प्रक्रिया का परिणाम है, उसमें मानवाधिकार की वास्तविक सुरक्षा असम्भव है। आर्थिक दृष्टिकोण से विखण्डित विश्व में मानवाधिकार एक सैद्धान्तिक पक्ष बनता जा रहा हैं। मानवाधिकार पर किसी सार्वभौम सूची का निर्माण करने का भी अव्यावहारिक पहलू सिद्ध हो रहा है। इसका कारण यह है कि मानवाधिकार मानवीय जीवन का मूलाधार है, जो एक वैकल्पिक जीवन–दृष्टि एवं सामाजिक व्यवस्था का भी प्रश्न है। मनुष्य की स्वतन्त्रता तथा गरिमा से ऊपर रहने वाली व्यवस्था से मानवाधिकार की वास्तविक संकल्पना की पूर्ति नहीं हो सकती, किन्तु मानवीय गरिमा

एवं प्रतिष्ठा को सम्भव बनाने वाले कतिपय सिद्धान्तों को स्वीकार करके मानवाधिकार का एक विश्व–स्तरीय मानक स्थापित किया जाए तथा विभिन्न राष्ट्रों के मध्य विद्यमान असमानताओं को दूर कर विश्व के सभी राष्ट्रों को समान रूप से प्रगति करने तथा विकसित होने के अवसर दिये जाएं, क्योंकि 21वीं शताब्दी में मानवाधिकार एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है, जिसे सबके लिए प्राप्त किया जाना आवश्यक है।

: REFERENCES :

1. "To achieve international co-operation is solving international problems of an economic, social, cultural or humanitarion character, and in promoting and encouraging respect for human rights and for fundamental freedoms for all without distinction as to race , sex, language, freedom or religion,……." UN charter,article-1(3).
2. ….the united nations shall promote …..the universal respect for , and observance of human right and fundamental freedom for all without distinction as to race,sex, language or religion." UN Charter , article -55(c) ." it may recommend for the purpose of promoting respect for and observance of human rights and fundamental freedom for all. UN charter article-62(2)
3. …to encourage respect for human rights and for fundamental freedoms for all without distinction as to race, sex language or religion, and to encourage recognition of the interdependence of the people of the world." UN charter article -76(c).
4. "….we know that the question of peace and the question of human rights, we shall never have peace, and it is only within the frame-work of peace the human rights can be fullydeveloped" cited in R. wasserstron, rights, human rights and racial discrimination, harper and Row , New york, 2015.
5. Palmer and Perkins,international relations,scientific book agency, Calcutta,1965.
6. ए0के0 कपूर, अन्तराष्ट्रीय विधि सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 2005
7. पुष्पेश पंत एवं श्रीपाल जैन, भारतीय विदेश नीति के नये आयाम, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 2020

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

SHIKSHA SAMVAD

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed or Refereed Research Journal
ISSN: 2584-0983 (Online) Impact-Factor, RPRI-3.87
Volume-02, Issue-01, Sept.- 2024
www.shikshasamvad.com
Certificate Number-Sept-2024/15

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

प्रतिभा क्रिस्टी और डॉ.राजकुमार

For publication of research paper title

"मानवाधिकार : एक विहंगम अवलोकन"

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-02, Issue-01, Month September, Year- 2024, Impact-Factor, RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.shikshasamvad.com